लेख

बात सिर्फ़ नल व पाइप की नहीं, औरतों के जीवन की है

पामेला फिलीपोज़

ऊंच-नीच से भरे विश्व के लोगों के बीच गहराती खाइयों के मध्य एक ऐसी दुनिया है जिसके बारे में शायद ही कभी लिखा-सुना जाता है। शहरी विशेषज्ञ, माइक डेविस एक अपवाद है। अपनी पुस्तक *"प्लैनिट ऑफ़ स्लम्स"* में डेविस 'तीसरी दुनिया शहर' के उस खांचे को अनावृत्त करते हैं जहां पानी व सीवर सुविधाएं आज भी उन करोड़ों लोगों की पहुंच से परे है जो पुनर्वास बस्तियों और झोपड़पट्टी कस्बों में बसते हैं। डेविस लिखते हैं— "दूसरे लोगों के कूड़ा करकट से नियमित तौर पर अंतरंगता सर्वाधिक गहन सामाजिक विभाजन है... मल में रहने की विवशता दो अस्तित्वात्मक मानवताओं को विभाजित करती है।"

अपर्याप्त खान-पान या आर्थिक गरीबी की तरह साफ़ पानी व शौचालयों का अभाव नागरिकों के स्वास्थ्य, सुख व प्रगति को क्षति पहुंचाता है। मानव विकास रिपोर्ट 2006 जिसमें "पानी व स्वच्छता की तंगी को इक्कीसवीं सदी की सबसे बड़ी मानव विकास चुनौती" कहा गया है, के अनुसार, आज विश्व में 1.1 अरब लोग यह नहीं जानते कि अपने घर के नल से साफ़ पानी आना क्या होता है तथा 2.6 अरब लोगों के पास मूल सफ़ाई के साधनों का अभाव है। पर इतनी बड़ी संख्याएं होने के बावजूद इस समस्या पर चुप्पी बनी हुई है क्योंकि इससे प्रभावित होने वाले नागरिक समाज में सबसे कम प्रत्यक्ष, प्रभावशाली व सवाक् हैं।

इन हालातों की सबसे अधिक कीमत महिलाओं को चुकानी पड़ती है। यह कीमत केवल समय और पैसे की ही नहीं बल्कि उनकी अपनी सुरक्षा व सम्मान की भी है। गरीब, अशक्त, बेआवाज़ और 'गलत' लिंग की होने के कारण उन्हें प्रशासन की जड़ता को झेलना पड़ता है। दिल्ली की पुनर्वास बस्तियों व झुग्गी-झोपड़ियों के बीच कार्यरत गैर सरकारी संगठन, *सेंटर फ़ॉर अर्बन एण्ड रीज़नल एक्सेलेंस* की निदेशक रेणु खोसला कहती हैं—"सौभाग्यशाली शहरी होने के नाते हम पानी व स्वच्छता सुविधाओं को सहज ही मान लेते हैं। पर अगर आप बस्तियों व पुनर्वास क्षेत्रों में महिलाओं से बात करेंगे तो जान पाएंगे कि उनका प्राथमिक सरोकार इन सेवाओं तक पहुंच के लिए अंतहीन संघर्ष है। पर हमारे प्रशासकों, नियोजकों व इंजीनियरों के लिए ये औरतें शायद मौजूद ही नहीं हैं।"

विडम्बना यह है कि सरकारी विभागों में कोई भी उस कीमत का अनुमान नहीं लगा रहा है जिसकी अदायगी वे लोग कर रहे हैं जिनमें इसे चुकाने का सामर्थ्य ही नहीं है। एक शौचालय को इस्तेमाल करने की कीमत को ही ले लें। चूंकि बस्तियों और रिहाइशी डेरों में पाखाने नहीं होते लिहाज़ा पांच व्यक्तियों वाला परिवार कम से कम तीन सौ रुपये माहवार केवल इस सुविधा पर खर्च करता है। अगर इस रकम पर आप थोड़ा अधिक ध्यान दें तो दैनिक जीवन की तकलीफ़देय सच्चाई से हम रूबरू होंगे— कैसे पैसे बचाने के लिए महिलाएं शौचालय उपयोग से बचती हैं और नतीजन गंभीर स्वास्थ्य समस्याएं सहती हैं।

इसके अलावा जब रुकी हुए नालियों व गटर का पानी पेयजल स्रोतों में मिल जाता है तब अन्य जल संक्रमण रोग भी इन इलाकों में फैल जाते हैं। रेणु खोसला की संस्था ने आगरा बस्ती में इन बीमारियों

फ़ोटो: विमेंस फ़ीचर सर्विस

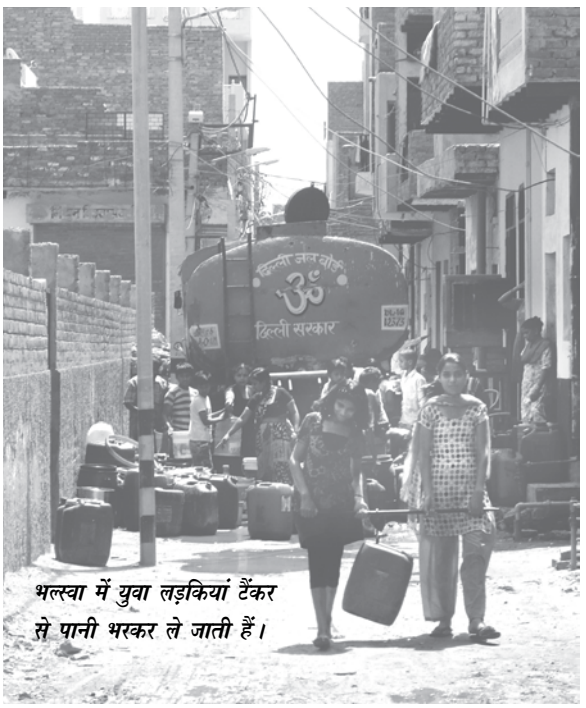

भल्स्वा में युवा लड़कियां टैंकर से पानी भरकर ले जाती हैं।

पर होने वाले खर्चे और वक्त की लागत पर एक अध्ययन किया है। आकड़ों के अनुसार एक परिवार सात सौ रुपये मासिक केवल जल संक्रमित बीमारियों के निदान पर खर्च करता है। मानव विकास रिपोर्ट 2006 के अनुसार "जल व स्वच्छता दो सर्वाधिक सशक्त बचावकारी औषधियां हैं जिनका उपयोग सरकार संक्रमित रोगों को घटाने के लिए कर सकती है।"

स्थानीय टैंकर, चांपाकल या स्थाई स्रोत से पानी भरना एक वृहद तनावकारी गतिविधि है— पड़ौसियों से झगड़ा-टंटा तथा परिवारों के बीच तनाव। यह बच्चों की पढ़ाई-लिखाई प्रभावित करने व असुरक्षा व दुश्मनी बढ़ाने के साथ-साथ अवसरवादी कीमतें भी अदा करता है। इतनी परेशानियों के बाद मिलने वाले पानी का स्तर भी अक्सर अगाध होता है। एक लम्बी कतार में घंटों खड़े रहने के बाद मरे हुए चूहे या कीड़ों से भरे पानी का मिलना ही नसीब होता है।

सार्वजनिक पाखानों में भी कुछ इसी तरह की बेरूखी व्याप्त है; उनकी देखभाल ठेकों पर दे दी जाती है और इसमें इतने अधिक पक्ष शामिल होते हैं कि कोई संस्थान या व्यक्ति पानी खत्म होने, बिजली न चालू होने अथवा सुविधाओं के मनमर्ज़ी अनुसार बंद कर दिए जाने की सूरत पर उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता। महिलाएं माहवारी के समय निष्क्रिय शौचालयों की तकलीफ़ से जूझने की गंभीर चुनौतियों की बात भी करती हैं। सार्वजनिक निकाय इन ज़रूरतों से अप्रभावित रहता है और यह धारणा बना लेता है कि इन लोगों को साफ़ पानी और सुविधाजनक पाखानों की कोई ज़रूरत नहीं हो सकती।

पर अब हालात बदल रहे हैं। महिला कार्यकर्ता व नागरिक समाज संगठन यह समझ रहे हैं कि महिलाओं के जीवन में मौकों व चयन की बढ़ोत्तरी साफ़ पानी व चालू शौचालय जैसे बुनियादी मुद्दों पर आधारित है।

अब चार अनिवार्य बातों को पुनः दोहराना अति आवश्यक हो गया है। पहला, हाशिए पर रहने वालों के जीवन की सच्चाइयों पर आम समझ को विस्तृत करना। भारतीय मध्य वर्ग ने लम्बे समय से गरीबों को गंदे माहौल में रहने के लिए दोषी करार दिया है। पर जैसा कि पुनर्वास बस्ती में रहने वाली दिल्ली की एक महिला ने टिप्पणी की, "हम ऐसे रहना नहीं चाहते, हम खुले में शौच नहीं जाना चाहते। पर जब गटर भरकर बह रहे हों और सार्वजनिक शौचालयों पर ताला बंद हो तो हम क्या करें?" जैसा कि विक्टर हूगो ने अपनी किताब *'ले मिसरेबल्स'* में उल्लेख किया है, "सीवर शहर की आत्मा है... सब कुछ बयान कर देता है।"

दूसरा, हमें पानी व सफ़ाई को महिलाओं का मुद्दा समझना होगा जो व्यक्तिगत सुरक्षा व निजी सम्मान से संबद्ध है। *जागोरी* की सलाहकार प्रभा खोसला के शब्दों में, 'मेरे लिए 'सम्मान' शब्द महिला अधिकारों के संदर्भ में गुंथा होना चाहिए। इसे महिलाओं को रोज़मर्रा के जीवन को समेटने के लिए व्यापक बनाया जाना चाहिए।'

समुदायों को खासकर औरतों के पानी व स्वच्छता के अधिकारों के प्रति और अधिक सवा्क बनाना तीसरा अहम् पहलू है। गरीब लोग इसलिए ठगे गए हैं क्योंकि नीति निर्माता व प्रशासक समझते हैं कि वे उन्हें बरगला सकते हैं। यहां पर नेतृत्व विकास व जागरूकता ने प्रभावशाली परिणाम प्रस्तुत किए हैं— सार्वजनिक रूप से बोलने में हिचकने वाली औरतें आज वरिष्ठ नेताओं व नगरपालिका अधिकारियों से जवाब-तलब कर रही हैं।

और अंततः चौथा काम है सराकारों व स्थानीय निकायों के पुरातनवादी व जड़ रवैयों में परिवर्तन लाना। प्रभा बताती हैं कि कैसे युगांडा में एक इंजीनियर को उन्हें यह बार-बार समझाना पड़ा कि सार्वजनिक सुविधाओं के निर्माण से पूर्व महिलाओं से मश्विरा करने की ज़रूरत महत्वपूर्ण क्यों है। "सरकार व सार्वजनिक अधिकारी आधारभूत सुविधाओं को लिंग निरपेक्ष समझते हैं। स्त्री व पुरुष दोनों के लिए पाइप पाइप हैं और नल नल हैं। यह तो सामान्य ज्ञान की बात है। पर मामला सिर्फ़ यही नहीं है। हम जानते हैं कि शौचालय के प्रारूप मात्र से ही महिलाओं पर प्रबल प्रभाव पड़ सकते हैं।"

तो फिर सवाल यह है: महिलाओं के सरोकार नीति निर्धारण व कार्यान्वयन को कितने गहरे तक प्रभावित करते हैं? आखिरकार, यह मुद्दा महज़ गरीबी का नहीं है बल्कि नीति-निर्धारण की गरीबी का है। यह केवल नलों और पाइपों की बात नहीं है। यह बात है महिलाओं रोज़मर्रा के जीवन की।

पामेला फिलीपोज़ *विमेंस फ़ीचर सर्विस, नई दिल्ली की निदेशक हैं।*